International Journal of Scientific Research in Science and Technology
© 2017 IJSRST | Volume 3 | Issue 4 | Print ISSN: 2395-6011 | Online ISSN: 2395-602X

आज के युग में एकात्म–मानव दर्शन की उपयोगिता

डॉ० रागिनी अग्रवाल
एसोसिएट प्रोफेसर, अर्थशास्त्र विभाग, कि०र०महिला महाविद्यालय, मथुरा,उत्तर प्रदेश।

बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी पं० दीन दयाल उपाध्याय जी न केवल कुशल राजनीतिज्ञ ही थे बल्कि वे एक अच्छे अर्थशास्त्री, समाजशास्त्री, मौलिक चिन्तक भी थे। आप "एकात्म–मानव–दर्शन" जैसी प्रगतिशील विचारधारा के प्रणेता थे जो कि नितान्त भारतीय दर्शन है। प्रत्यक्ष जीवन का दर्शन हैं इस सन्दर्भ में शरद अनन्त कुलकर्णी कहते हैं "एकात्म मानव दर्शन भारतीय संस्कृति का जीवन दर्शन है। भारतीय संस्कृति एकात्मवादी है, अतः शरीर मन बुद्धि एवं आत्मा से युक्त, धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष के चतुर्विध पुरुषार्थो की साधना करने वाला और एक ही साथ परिवार जाति, राष्ट्र एवं मानव समाज आदि विविध एकात्म समष्टियों का प्रतिनिधित्व करने की क्षमता रखने वाला मानव, इस दर्शन का केन्द्र बिन्दु है।" इस दर्शन में व्यक्ति, राष्ट्र एवं विश्व–विकास का भाव छिपा हुआ है। एकात्म–मानव–दर्शन मानव जीवन व सम्पूर्ण सृष्टि के एक मात्र सम्बन्ध का दर्शन है। एकात्म मानव वाद को सर्पिलाकार मण्डलाकृति द्वारा समझा गया जिससे स्पष्ट होता है कि जैसे केन्द्र में व्यक्ति,व्यक्ति से जुड़ा हुआ एक छोटा परिवार, परिवार से जुड़ा हुआ एक छोटा समाज, समाज से जुड़ा हुआ एक राष्ट्र और फिर राष्ट्र से जुड़ा हुआ विश्व और अंत में अनन्त ब्रहमाण्ड को अपने में समाविष्ट किये हुये है। इसे अखण्ड मण्डलाकार रचना कहा जाता है।

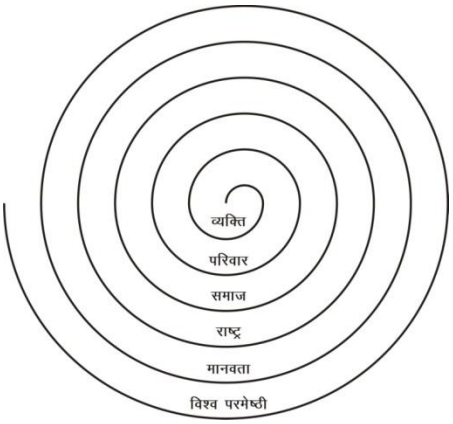

इस अखण्ड मण्डलाकार आकृति में एक इकाई में से दूसरी इकाई निकलती है दूसरी इकाई से तीसरी, तीसरी से चौथी और इस प्रकार यह प्रक्रिया अंत तक चलती रहती है। यह हरेक इकाई का उत्तरोत्तर विकास हो तो जाने की प्रक्रिया होने के कारण इसमें अधिकाधिक व्यापकता एवं विशालता है। तथा इन इकाइयों के हित सम्बन्धों में परस्पर कोई विरोध नही है। छोटी इकाइयों की बड़ी इकाइयों की ओर घेराबन्दी नही होती अतएव दोनों में संघर्ष उत्पन्न होने की बात को भी इस रचना में कोई स्थान नहीं है। व्यक्ति, परिवार, जाति, राष्ट्र, मानवता, सभी अखण्ड मण्डलाकार विकास मार्ग के चरण है और इसीलिए उनके हित सम्बन्धों में आपस में विरोध तो है ही नहीं, परस्पर पूरकता अवश्य है।"

दीनदयाल जी का कहना था कि सर्वप्रथम व्यक्ति को वैचारिक रूप से गठित होना चाहिये तभी समाज संगठित हो सकता है। इसके परिणाम स्वरूप व्यक्ति से परिवार, समाज, राष्ट्र, मानवता और चराचर सृष्टि का विचार किया जा सकता है। इसी का नाम एकात्म–मानव दर्शन है। "पं० जी कहते है जहाँ एकता, ममता, समता एवं बंधुता होती है वही एकात्म मानववाद का दर्शन होता है। "एकात्म" को हम अविभाज्य व एकीकरण भी कह सकते है। अर्थात ऐसा समाज जहाँ किसी का विभाजन न हो और "मानववाद" ऐसी विचारधारा है जो मानव के मूल्यों और उनसे सम्बन्धित मसलों पर ध्यान देती है।

आज के भौतिकवादी युग में जहाँ साम्यवाद व पूँजीवाद की विसंगतियाँ देश को गर्त में ढ़केल रही है। समय के साथ विश्व के दर्शनों ने उतार चढ़ाव देखे है, उनकी उपयोगिता समाप्त होती जा रही है। आज भारत देश ही नहीं वरन् सम्पूर्ण विश्व आर्थिक विषमता, पर्यावरण–असंतुलन, आतंकवाद, आर्थिक संकट, बेरोजगारी, गरीबी, कुपोषण जैसी समस्याओं एवं चिकनगुनिया एवं डेंगू जैसी महामारियों से जूझ रहा है। प्रकृति का अनियन्त्रित शोषण, बढ़ता तापमान, बढ़ता प्रदूषण, जलसंकट, अनेक जीव प्रजातियों का विलोपन आदि चुनौतियाँ बढ़ रही है। विश्व दो तिहाई से ज्यादा उत्पादन पर चंद देशों की बहुराष्ट्रीय कम्पनीयों का आधिपत्य आज चिन्ता का विषय बन गया है।

इन सभी समस्याओ के कारण आज आर्थिक व सामाजिक विकास का मार्ग अवरूद्व हो गया है। ऐसे में एकात्म मानव दर्शन की उपयोगिता आज का समाज महसूस करने लगा है। क्योकि पंडित दीनदयाल जी द्वारा शाश्वत भारतीय चिन्तन के आधार पर प्रतिपादित "एकात्म मानव दर्शन" ही एक ऐसा अमोघ शस्त्र है जिसके अनुसरण से सभी समस्याओ को समाधान सम्भव है। अर्थात् एकात्म मानव दर्शन एक ऐसा आर्थिक व समाजिक चिन्तन है जो साम्यवाद व पूँजीवाद की विसंगतियों से ऊपर देश को ही नही वरन् सम्पूर्ण विश्व को दिशा दिखाने में सक्षम है।

समन्यवादी संस्कृति– हमारी भारतीय संस्कृति समन्वय वादी है। व्यक्ति व समाज में समन्वय, भौतिकता व आध्यात्मिकता में समन्वय, राष्ट्र व विश्व में समन्वय, विभिन्न विचारों व पंथो मे समन्वय तथा हर प्रकार के संघर्षो को शामित करने की अद्भुत समन्वय क्षमता भारतीय संस्कृति का प्रमुख वैशिष्ट्य पूर्ण लक्षण है। हमारे राष्ट्र की यही विशिष्टता एकात्म मानव दर्शन का अनुकरण करते हुए विश्व में प्रत्येक मानव को गौरव पूर्ण जीवन सुनिश्चत् करने में सहयोग प्रदान करेगी ऐसी आशा पंडित जी के साथ–साथ हम सभी देशवासियों के मन में भी संचार कर रही है। पंडित जी का एकात्म–मानव दर्शन केवल राष्ट्र चिन्तन तक ही सीमित नही था बल्कि उससे भी परे जाता है जैसा कि उनके एक भाषण के एक अंश से परिलक्षित होता है। अपने भाषण में पं० दीनदयाल जी ने कहा था कि "..... इसके साथ ही हमें यह सोचना होगा किं कर्त्तव्य विमूढ़ अवस्था में फंसे आज के विश्व को प्रगति पथ पर अग्रसर करने के लिए क्या हम कुछ कर सकते है? हमें चाहिये कि आज की दुनियाँ पर बोझ बनकर न रहते हुए, केवल अपने स्वार्थ का ही विचार न करते हुए, अपनी संस्कृति और परम्परा में दुनियाँ को देने योग्य क्या–क्या बाते है, इसका चिन्तन कर वैश्विक प्रगति के कार्य में सहयोग दे। विगत हजार वर्षो से हमारा सारा ध्यान स्वाधीनता संग्राम में और आत्मरक्षा के कार्यो में लगा रहा। अतः दुनिया के अन्य राष्ट्रों की तुलना में हम बराबरी में खड़े नही हो सकते, परन्तु हम स्वाधीन हो गये है, अब हमें इस कमी को पूरा करना चाहिए।"

पं० दीनदयाल जी के इन विचारो से एकात्म मानव दर्शन का आयाम कितना विशाल है, परिलक्षित होता है। आज हमारा राष्ट्र, हमारी संस्कृति को, जो कि विगत वर्षो में भूल चुका था, पुनः याद करने व अपनाने में लगा हुआ है बल्कि हम यह कहें कि राष्ट्र ही नही अपितु पूरा विश्व भारतीय संस्कृति को अपनाने में आगे बढ़ रहा है तो कोई अतिश्योक्ति नही होगी। आज सम्पूर्ण विश्व भौतिकता के साथ–साथ आध्यमिकता को भी अपनाने में आगे बढ़ रहा है। व्यक्ति और समाज एकात्मकता के बन्धन से आपस में जुड़े होते है, व्यक्ति और समाज की पुरूषार्थ साधना (धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष) एक दुसरे के विरोधी न होकर परस्पर पूरक और पोषक होती है। इसलिए अनेक संस्थाओं का निर्माण हुआ क्योकि व्यक्ति इन संस्थाओ का एक अंग होता है। विविध सम्बन्धों में एकात्मकता का ध्यान रख कर ही व्यक्ति यदि विचार एवं व्यवहार करें तभी उसका विकास होता है तभी वह स्वयं भी सुखी रह सकता है और समाज को भी सुखी रख सकता है।

दीन दयाल जी का कहना है कि हमारे अस्तित्व का कारण परस्पर अवलम्बन व पूरकता है। उनके शब्दों में–"वनस्पति एवं प्राणी दोनो एक दुसरे की आवश्यकता को पूरा करते हुए जीवित रहते है। हमें आक्सीजन वनस्पतियों से मिलती है तथा वनस्पतियों के लिए आवश्यक कार्बन डाइआक्साइड प्राणीजगत से प्राप्त होती है। इस परस्पर पूरकता के कारण ही संसार चल रहा है।" उन्होने आगे भी कहा है कि –

"संसार में एकता का दर्शन कर उसके विविध रूपों के बीच परस्पर पूरकता को पहचानकर, उनमें परस्पर अनुकुलता का विकास करना तथा उनका संस्कार करना ही संस्कृति है।"

आज के परिर्वतन–शील परिवेश में यदि सभी राष्ट्र एकात्म विश्व के अंग के रूप में साधनों को मर्यादित उपभोग के साथ सबके सामूहिक विकास का कार्य करें और प्रत्येक व्यक्ति इसी आयामी भाव से परिवार समाज व प्रकृति के बीच सामंजस्य पूर्ण व्यवहार करें तब ही विश्व में बिना संघर्ष व टकराव के सौहार्द स्थापित हो पायेगा और मानव जीवन का उददेश्य "सुखमय–जीवन प्राप्त हो सकेगा और पंडित जी का एकात्म–मानव दर्शन साकार हो सकेगा।

सन्दर्भ–

1. उपाध्याय दीनदयाल – एकात्म दर्शन, दीनदयाल शोध संस्थान, नई दिल्ली
2. उपाध्याय दीनदयाल – एकात्म दर्शन, सुरूचि प्रकाशक, केशव कुंज, झण्डे वाला, नई दिल्ली
3. शरद अनन्त कुलकर्णी – एकात्म अर्थनीति, सुरूचि प्रकाशक, केशव कुंज, झण्डे वाला, नई दिल्ली
3. शर्मा महेश चन्द्र – दीनदयाल उपाध्याय कर्तव्य एवं विचार वसुधा पब्लिकेशन प्रा० लि०, नई दिल्ली